भूत

मुरादाबाद के पंडित सीतानाथ चौबे गत 30 वर्षों से वहाँ के वकीलों के नेता हैं। उनके पिता उन्हें बाल्यावस्था में ही छोड़कर परलोक सिधारे थे। घर में कोई संपत्ति न थी। माता ने बड़े-बड़े कष्ट झेलकर उन्हें पाला और पढ़ाया। सबसे पहले वह कचहरी में 15) मासिक पर नौकर हुए। फिर वकालत की परीक्षा दी। पास हो गये। प्रतिभा थी, दो-ही-चार वर्षों में वकालत चमक उठी। जब माता का स्वर्गवास हुआ तब पुत्र का शुमार जिले के गण्यमान्य व्यक्तियों में हो गया था। उनकी आमदनी एक हजार रुपये महीने से कम न थी। एक विशाल भवन बनवा लिया था, कुछ जमींदारी ले ली थी, कुछ रुपये बैंक में रख दिये थे, और कुछ लेन-देन में लगा दिये। इस समृध्दि पर चार पुत्रों का होना उनके भाग्य को आदर्श बनाए हुए था। चारों लड़के भिन्न-भिन्न दर्जों में पढ़ते थे। मगर यह कहना कि सारी विभूति चौबेजी के अनवरत परिश्रम का फल थी, उनकी पत्नी मंगला देवी के साथ अन्याय करना है। मंगला बड़ी सरल, गृह-कार्य में कुशल और पैसे का काम धेले में चलानेवाली स्त्री थी।

जब तक अपना घर न बन गया, उसने 3) महीने से अधिक का मकान किराये पर नहीं लिया; और रसोई के लिए मिसराइन तो उसने अब तक न रखी थी। उसे अगर कोई व्यसन था, तो गहनों का; और चौबेजी को भी अगर कोई व्यसन था, तो स्त्री को गहने पहनाने का। वह सच्चे पत्नी-परायण मनुष्य थे। साधारणत: महफिलों में वेश्याओं से हँसी-मजाक कर लेना उतना बुरा नहीं समझा जाता; पर पंडितजी अपने जीवन में कभी नाच-गाने की महफिल में गये ही नहीं। पाँच बजे तड़के से लेकर बारह बजे रात तक उनका व्यसन मनोरंजन, पढ़ना-लिखना, अनुशीलन जो कुछ था, कानून था, न उन्हें राजनीति से प्रेम था, न जाति-सेवा से। ये सभी काम उन्हें व्यर्थ से जान पड़ते थे। उनके विचार में अगर कोई काम करने लायक था, तो बस, कचहरी जाना,

बहस करना, रुपये जमा करना और भोजन करके सो रहना। जैसे वेदान्ती को ब्रह्म के अतिरिक्त जगत् मिथ्या जान पड़ता है, वैसे ही चौबेजी को कानून के सिवा सारा संसार मिथ्या प्रतीत होता था। सब माया थी, एक कानून ही सत्य था। चौबेजी के मुख-चंद्र में केवल एक कला की कमी थी। उनके कोई कन्या न थी। पहलौठी कन्या के बाद फिर कन्या हुई ही नहीं और न अब होने की आशा ही थी। स्त्री और पुरुष, दोनों उस कन्या को याद करके रोया करते थे। लड़कियाँ बचपन में लड़कों से ज्यादा चोंचले करती हैं। उन चोंचलों के लिए दोनों प्राणी विकल रहते। माँ सोचती, लड़की होती, तो उसके लिए गहने बनवाती, उसके बाल गूँथती। लड़की पैजनियाँ पहने ठुमक-ठुमक आँगन में चलती तो कितना आनंद आता ! चौबे सोचते, कन्यादान के बिना मोक्ष कैसे होगा ? कन्यादान महादान है। जिसने यह दान न दिया, उसका जन्म ही वृथा गया।

आखिर यह लालसा इतनी प्रबल हुई कि मंगला ने अपनी छोटी बहन को बुलाकर कन्या की भाँति पालने का निश्चय किया। उसके माँ-बाप निर्धन थे। राजी हो गये। यह बालिका मंगला की सोतेली-माँ की कन्या थी। बड़ी सुन्दर और बड़ी चंचल थी। नाम था बिन्नी। चौबेजी का घर उसके आने से खिल उठा। दो-चार ही दिनों में लड़की अपने माँ-बाप को भूल गयी। उसकी उम्र तो केवल चार वर्ष की थी; पर उसे खेलने की अपेक्षा कुछ काम करना अच्छा लगता था। मंगला रसोई बनाने जाती तो बिन्नी भी उसके पीछे-पीछे जाती, उससे आटा गूँधाने के लिए झगड़ा करती। तरकारी काटने में उसे बड़ा मजा आता था। जब तक वकील साहब घर पर रहते, तब तक वह उनके साथ दीवानखाने में बैठी रहती। कभी किताब उलटती, कभी दवात-कलम से खेलती। चौबेजी मुस्कराकर कहते, 'बेटी, मार खाओगी ? '

बिन्नी कहती 'तुम मार खाओगे, मैं तुम्हारे कान काट लूँगी, जूजू को बुलाकर पकड़ा दूँगी। ' इस पर दीवानखाने में खूब कहकहे उड़ते। वकील साहब कभी इतने बाल्यवत्सल न थे ! जब बाहर से आते तो कुछ-न-कुछ सौगात बिन्नी के वास्ते जरूर लाते, और घर में कदम रखते ही पुकारते बिन्नी बेटी, चलो। बिन्नी दौड़ती हुई आकर उनकी गोद में बैठ जाती। मंगला एक दिन बिन्नी को लिए बैठी थी। इतने में पंडितजी आ गये।बिन्नी दौड़कर उनकी गोद में जा बैठी। पंडितजी ने पूछा, 'तू किसकी बेटी है ? '

बिन्नी -'न बताऊँगी। '

मंगला -'क़ह दे बेटा, जीजी की बेटी हूँ। '

पंडित -'तू मेरी बेटी है बिन्नी, कि इनकी ? '

बिन्नी-' न बताऊँगी। '

पंडित -'अच्छा, हम लोग आँखें बन्द किये बैठे हैं; बिन्नी जिसकी बेटी होगी, उसकी गोद में बैठ जायगी। '

बिन्नी उठी और फिर चौबेजी की गोद में बैठ गयी।

पंडित -'मेरी बेटी है, मेरी बेटी है; अब न कहना कि मेरी बेटी है। '

मंगला -'अच्छा, जाओ बिन्नी, अब तुम्हें मिठाई न दूँगी, गुड़िया भी न मँगा दूँगी ! '

बिन्नी -'भैयाजी मँगवा देंगे, तुम्हें न दूँगी। '

वकील साहब ने हँसकर बिन्नी को छाती से लगा लिया और गोद में लिये हुए बाहर चले गये। वह अपने इष्ट-मित्रों को भी इस बालक्रीड़ा का रसास्वादन कराना चाहते थे।

आज से जो कोई बिन्नी से पूछता कि 'तू किसकी बेटी है, ' तो बिन्नी चट कह देती 'भैया की। '

एक बार बिन्नी का बाप आकर उसे अपने साथ ले गया। बिन्नी ने रो-रोकर दुनिया सिर पर उठा ली। इधर चौबेजी को भी दिन काटना कठिन हो गया। एक महीना भी न गुजरने पाया था कि वह फिर ससुराल गये और

बिन्नी को लिवा लाये। बिन्नी अपनी माता और पिता को भूल गयी। वह चौबेजी को अपना बाप और मंगला को अपनी माँ समझने लगी। जिन्होंने उसे जन्म दिया था, वे अब गैर हो गये। कई साल गुजर गये। वकील साहब के बेटों के विवाह हुए। उनमें से दो अपने बाल-बच्चों को लेकर अन्य जिलों में वकालत करने चले गये। दो कालेज में पढ़ते थे। बिन्नी भी कली से फूल हुई। ऐसी रूप-गुण शीलवाली बालिका बिरादरी में और न थी पढ़ने-लिखने में चतुर, घर के काम-धन्धों में कुशल बूटे-कसीदे और सीने-पिरोने में दक्ष, पाककला में निपुण, मधुरभाषिणी, लज्जाशीला, अनुपम रूप की राशि। अँधेरे घर में उसके सौंदर्य की दिव्य ज्योति से उजाला होता था। उषा की लालिमा में, ज्योत्स्ना की मनोहर छटा में, खिले हुए गुलाब के ऊपर सूर्य की किरणों से चमकते हुए तुषार-बिन्दु में भी वह प्राणप्रद सुषमा और वह शोभा न थी, श्वेत हेममुकुटधारी पर्वत में भी वह शीतलता न थी, जो बिन्नी अर्थात् विंध्येश्वरी के विशाल नेत्रों में थी। चौबेजी ने बिन्नी के लिए सुयोग्य वर खोजना शुरू किया। लड़कों की शादियों में दिल का अरमान निकाल चुके थे। अब कन्या के विवाह में हौसले पूरे करना चाहते थे। धन लुटाकर कीर्ति पा चुके थे, अब दान-दहेज में नाम कमाने की लालसा थी। बेटे का विवाह कर लेना आसान है पर कन्या के विवाह में आबरू निबाह ले जाना कठिन है, नौका पर सभी यात्रा करते हैं,

जो तैरकर नदी पार करे, वही प्रशंसा का अधिकारी है। धन की कमी न थी। अच्छा घर और सुयोग्य वर मिल गया। जन्मपत्र मिल गये, बनावत बन गया। फलदान और तिलक की रस्में भी अदा कर दी गयीं।

पर हाय रे दुर्दैव ! कहाँ तो विवाह की तैयारी हो रही थी, द्वार पर दरजी, सुनार, हलवाई सब अपना-अपना काम कर रहे थे, कहाँ निर्दय विधता ने और ही लीला रच दी ! विवाह के एक सप्ताह पहले मंगला अनायास

बीमार पड़ी, तीन ही दिन में अपने सारे अरमान लिये हुए परलोक सिधार गयी।

सन्ध्या हो गयी थी। मंगला चारपाई पर पड़ी हुई थी। बेटे, बहुएं, पोते-पोतियाँ सब चारपाई के चारों ओर खड़े थे। बिन्नी पैताने बैठी मंगला के पैर दबा रही थी। मृत्यु के समय की भयंकर निस्तब्धाता छायी हुई थी।

कोई किसी से न बोलता था; दिल में सब समझ रहे थे, क्या होनेवाला है। केवल चौबेजी वहाँ न थे।

सहसा मंगला ने इधर-उधर इच्छापूर्ण दृष्टि से देखकर कहा, 'ज़रा उन्हें बुला दो; कहाँ हैं ? '

पंडितजी अपने कमरे में बैठे रो रहे थे। सन्देश पाते ही आँसू पोंछते हुए घर में आये और बड़े धैर्य के साथ मंगला के सामने हो गये। डर रहे थे कि मेरी आँखों से आँसू की एक बूँद भी निकली, तो घर में हाहाकार

मच जायगा।

मंगला ने कहा, 'एक बात पूछती हूँ बुरा न मानना बिन्नी तुम्हारी कौन है ? '

पंडित -'बिन्नी कौन है ? मेरी बेटी है और कौन ? '

मंगला -'हाँ, मैं तुम्हारे मुँह से यही सुनना चाहती थी। उसे सदा अपनी बेटी समझते रहना। उसके विवाह के लिए मैंने जो-जो तैयारियाँ की थीं, उनमें कुछ काट-छाँट मत करना। '

पंडित -'इसकी कुछ चिन्ता न करो। ईश्वर ने चाहा, तो उससे कुछ ज्यादा धूम-धाम के साथ विवाह होगा। '

मंगला -'उसे हमेशा बुलाते रहना, तीज-त्योहार में कभी मत भूलना। '

पंडित -'इन बातों की मुझे याद दिलाने की जरूरत नहीं। '

मंगला ने कुछ सोचकर फिर कहा, 'इसी साल विवाह कर देना। '

पंडित -'इस साल कैसे होगा ? '

मंगला -'यह फागुन का महीना है। जेठ तक लगन है। '

पंडित-' हो सकेगा तो इसी साल कर दूँगा। '

मंगला -'हो सकने की बात नहीं, जरूर कर देना। '

पंडित -'क़र दूँगा। '

इसके बाद गोदान की तैयारी होने लगी। बुढ़ापे में पत्नी का मरना बरसात में घर का गिरना है। फिर उसके बनने की आशा नहीं होती। मंगला की मृत्यु से पंडितजी का जीवन अनियमित और विश्रृंखल-सा

हो गया। लोगों से मिलना-जुलना छूट गया। कई-कई दिन कचहरी ही न जाते। जाते भी तो बड़े आग्रह से। भोजन से अरुचि हो गयी। विंध्येश्वरी उनकी दशा देख-देखकर दिल में कुढ़ती और यथासाधय उनका दिल बहलाने की चेष्टा किया करती थी। वह उन्हें पुराणों की कथाएं पढ़कर सुनाती, उनके लिए तरह-तरह की भोजन-सामग्री पकाती और उन्हें आग्रह-अनुरोध के साथ खिलाती थी। जब तक वह न खा लेते, आप कुछ न खाती थी। गरमी के दिन थे ही। रात को बड़ी देर तक उनके पैताने बैठी पंखा झला करती और जब तक वह न सो जाते, तब तक आप भी सोने न जाती। वह जरा भी सिर-दर्द की शिकायत करते, तो तुरन्त उनके सिर में तेल डालती। यहाँ तक कि रात को जब उन्हें प्यास लगती, तब खुद दौड़कर आती और उन्हें पानी पिलाती।

धीरे-धीरे चौबेजी के ह्रदय में मंगला केवल एक सुख की स्मृति रह गयी।

एक दिन चौबेजी ने बिन्नी को मंगला के सब गहने दे दिये। मंगला का यह अंतिम आदेश था। बिन्नी फूली न समायी। उसने उस दिन खूब बनाव-सिंगार किया। जब संध्या के समय पंडितजी कचहरी से आये, तो वह

गहनों से लदी हुई उनके सामने कुछ लजाती और मुस्कराती हुई आकर खड़ी हो गयी।

पंडितजी ने सतृष्ण नेत्रों से देखा। विंध्येश्वरी के प्रति अब उनके मन में एक नया भाव अंकुरित हो रहा था। मंगला जब तक जीवित थी, वह उनसे पिता-पुत्री के भाव को सजग और पुष्ट कराती रहती थी। अब मंगला न

थी। अतएव वह भाव दिन-दिन शिथिल होता जाता था। मंगला के सामने बिन्नी एक बालिका थी। मंगला की अनुपस्थिति में वह एक रूपवती युवती थी। लेकिन सरल-ह्रदया बिन्नी को इसकी रत्ती-भर भी खबर न थी कि भैया के भावों में क्या परिवर्तन हो रहा है। उसके लिए वह वही पिता के तुल्य भैया थे। वह पुरुषों के स्वभाव से अनभिज्ञ थी। नारी-चरित्र में अवस्था के साथ मातृत्व का भाव दृढ़ होता जाता है। यहाँ तक कि एक समय ऐसा आता है, जब नारी की दृष्टि में युवक मात्र पुत्र तुल्य हो जाते हैं। उसके मन में विषय-वासना का लेश भी नहीं रह जाता। किन्तु पुरुषों में यह अवस्था कभी नहीं आती ! उनकी कामेन्द्रियाँ क्रियाहीन भले ही हो जायँ, पर विषय-वासना संभवत: और भी बलवती हो जाती है। पुरुष वासनाओं से कभी मुक्त नहीं हो पाता, बल्कि ज्यों-ज्यों अवस्था ढलती है त्यों-त्यों ग्रीष्म-ऋतु के अंतिम काल की भाँति उसकी वासना की गरमी भी प्रचंड होती जाती है। वह तृप्ति के लिए नीच साधनों का सहारा लेने को भी प्रस्तुत हो जाता है। जवानी में मनुष्य

इतना नहीं गिरता। उसके चरित्र में गर्व की मात्र अधिक रहती है, जो नीच साधनों से घृणा करता है। वह किसी के घर में घुसने के लिए जबरदस्ती कर सकता है, किन्तु परनाले के रास्ते नहीं जा सकता। पंडितजी ने बिन्नी को सतृष्ण नेत्रों से देखा और फिर अपनी इस उच्छृंखलता पर लज्जित होकर आँखें नीची कर लीं ! बिन्नी इसका कुछ मतलब न समझ सकी।

पंडितजी बोले, 'तुम्हें देखकर मुझे मंगला की उस समय की याद आ रही है ज़ब वह विवाह के समय यहाँ आयी थी। बिलकुल ऐसी सूरत थी। यही गोरा रंग, यही प्रसन्न-मुख, यही कोमल गाल, ये ही लजीली आँखें। वह चित्र अभी तक मेरे ह्रदय-पट पर खिंचा हुआ है, कभी नहीं मिट सकता। ईश्वर ने तुम्हारे रूप में मेरी मंगला मुझे फिर दे दी। '

बिन्नी --टआपके लिए क्या जलपान लाऊँ ? '

पंडित ले आना, 'अभी बैठो, मैं बहुत दुखी हूँ। तुमने मेरे शोक को भुला दिया है। वास्तव में तुमने मुझे जिला लिया, नहीं तो मुझे आशा न थी कि मंगला के पीछे मैं जीवित रहूँगा। तुमने प्राणदान दिया। नहीं जानता तुम्हारे चले जाने पर मेरी क्या दशा होगी। '

बिन्नी -'क़हाँ चले जाने के बाद ? मैं तो कहीं नहीं जा रही हूँ। '

पंडित -'क्यों, तुम्हारे विवाह की तिथि आ रही है। चली ही जाओगी। '

बिन्नी -'(सकुचाती हुई) ऐसी जल्दी क्या है ? '

पंडित -'ज़ल्दी क्यों नहीं। जमाना हँसेगा।'

बिन्नी -'हँसने दीजिए। मैं यहीं आपकी सेवा करती रहूँगी। '

पंडित -'नहीं बिन्नी, मेरे लिए तुम क्यों हलकान होगी। मैं अभागा हूँ, जब तक जिन्दगी है, जिऊँगा; चाहे रोकर जिऊँ, चाहे हँसकर। हँसी मेरे भाग्य से उठ गई। तुमने इतने दिनों सँभाल लिया, यही क्या कम एहसान किया। मैं यह जानता हूँ कि तुम्हारे जाने के बाद कोई मेरी खबर लेनेवाला नहीं रहेगा, यह घर तहस-नहस हो जायगा और मुझे घर छोड़कर भागना पड़ेगा। पर क्या किया जाय, लाचारी है। तुम्हारे बिना अब मैं यहाँ क्षण-भर भी नहीं रह सकता। मंगला की खाली जगह तो तुमने पूरी की, अब तुम्हारा स्थान कौन पूरा करेगा ? '

बिन्नी -'क्या इस साल रुक नहीं सकता। मैं इस दशा में आपको छोड़ कर न जाऊँगी। '

पंडित -'अपने बस की बात तो नहीं ? वे लोग आग्रह करेंगे, तो मजबूर होकर करना ही पड़ेगा। '

बिन्नी -'बहुत जल्दी मचायें तो आप कह दीजिएगा, अब नहीं करेंगे।उन लोगों के जी में जो आये, करें। यहाँ कोई उनका दबैल बैठा हुआ है ? '

पंडित -'वे लोग अभी से आग्रह कर रहे हैं।'

बिन्नी -'आप फटकार क्यों नहीं देते ? '

पंडित -'क़रना तो है ही फिर विलम्ब क्यों करूँ ? यह दु:ख और वियोग तो एक दिन होना ही है। अपनी विपत्ति का भार तुम्हारे सिर क्यों रखूँ ?'

बिन्नी -'दु:ख-सुख में काम न आऊँगी, तो और किस दिन काम आऊँगी ? '

पंडितजी के मन में कई दिनों तक घोर संग्राम होता रहा। वह अब बिन्नी को पिता की दृष्टि से न देख सकते थे। बिन्नी अब मंगला की बहन और उनकी साली थी। जमाना हँसेगा, तो हँसे; जिन्दगी तो आनन्द से गुजरेगी। उनकी भावनाएं कभी इतनी उल्लासमयी न थीं। उन्हें अपने अंगों में फिर जवानी की स्फूर्ति का अनुभव हो रहा था ! वह सोचते, बिन्नी को मैं अपनी पुत्री समझता था; पर वह मेरी पुत्री

है तो नहीं। इस तरह समझने से क्या होता है ? कौन जाने, ईश्वर को यही मंजूर हो; नहीं तो बिन्नी यहाँ आती ही क्यों ? उसने इसी बहाने से यह संयोग निश्चित कर दिया होगा। उसकी लीला तो अपरम्पार है।

पंडितजी ने वर के पिता को सूचना दे दी कि कुछ विशेष कारणों से इस साल विवाह नहीं हो सकता।

विन्धयेश्वरी को अभी तक कुछ खबर न थी कि मेरे लिए क्या-क्या षडयंत्र रचे जा रहे हैं। वह खुश थी कि मैं भैयाजी की सेवा कर रही हूँ और भैयाजी मुझसे प्रसन्न हैं ! बहन का इन्हें बड़ा दु:ख है। मैं न रहूँगी, तो यह

कहीं चले जायँगे क़ौन जाने, साधु-संन्यासी न हो जायँ ! घर में कैसे मन लगेगा। वह पंडितजी का मन बहलाने का निरंतर प्रयत्न करती रहती थी। उन्हें कभी मनमारे न बैठने देती। पंडितजी का मन अब कचहरी में न लगता था। घण्टे-दो-घण्टे बैठकर चले आते थे। युवकों के प्रेम में विकलता होती है और वृध्दों के प्रेम में श्रृद्धा। वे अपनी यौवन की कमी को खुशामद से, मीठी बातों से और हाजिरजवाबी से पूर्ण करना चाहते हैं। मंगला को मरे अभी तीन ही महीने गुजरे थे कि चौबेजी ससुराल पहुँचे। सास ने मुँहमाँगी मुराद पाई। उसके दो पुत्र थे। घर में कुछ पूँजी न थी।

उनके पालन और शिक्षा के लिए कोई ठिकाना नजर न आता था। मंगला मर ही चुकी थी। लड़की का ज्योही विवाह हो जायगा, वह अपने घर की हो रहेगी। फिर चौबे से नाता ही टूट जायगा। वह इसी चिंता में पड़ी हुई

थी कि चौबेजी पहुँचे, मानो देवता स्वयं वरदान देने आये हों। जब चौबेजी भोजन करके लेटे, तो सास ने कहा, 'भैया, कहीं बातचीत हुई कि नहीं ? '

पंडित -'अम्माँ, अब मेरे विवाह की बातचीत क्या होगी ? '

सास -'क्यों भैया, अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है ? '

पंडित -'क़रना भी चाहूँ तो बदनामी के डर से नहीं कर सकता। फिर मुझे पूछता ही कौन है ? '

सास -'पूछने को हजारों हैं। दूर क्यों जाओ, अपने घर ही में लड़की बैठी है। सुना है, तुमने मंगला के सब गहने बिन्नी को दे दिये हैं। कहीं और विवाह हुआ, तो ये कई हजार की चीजें तुम्हारे हाथों से निकल जायँगी। तुमसे अच्छा घर मैं कहाँ पाऊँगी। तुम उसे अंगीकार कर लो, तो मैं तर जाऊँ। '

अंधा क्या माँगे, दो आँखें ! चौबेजी ने मानो विवश होकर सास की प्रार्थना स्वीकार कर ली।

बिन्नी अपने गाँव के कच्चे मकान में अपनी माँ के पास बैठी हुई है। अबकी चौबेजी ने उसकी सेवा के लिए एक लौंडी भी साथ कर दी है। विंध्येश्वरी के दोनों छोटे भाई विस्मित हो-होकर उसके आभूषणों को देख रहे हैं। गाँव की और कई स्त्रियाँ उसे देखने आयी हुई हैं और उसके रूपलावण्य का विकास देखकर चकित हो रही हैं। यह वही बिन्नी है, जो यहाँ मोटी फरिया पहिने खेला करती थी ! रंग-रूप कैसा निखर आया है ! सुख की देह है न ! जब भीड़ कम हुई, एकांत हुआ, तो माता ने पूछा, 'तेरे भैयाजी तो अच्छी तरह हैं न बेटी ! यहाँ आये थे, तो बहुत दुखी थे। मंगला का शोक उन्हें खाये जाता है। संसार में ऐसे मर्द भी होते हैं, जो स्त्री के लिए प्राण दे देते हैं। नहीं तो यहाँ स्त्री मरी और चट दूसरा ब्याह रचाया गया। मानो मनाते रहते हैं कि यह मरे तो नयी-नवेली बहू घर लायें ! '

विंधये.-' उन्हें याद करके रोया करते हैं। चली आयी हूँ, न-जाने कैसे होंगे ! '

माता -'मुझे तो डर लगता है कि तेरा ब्याह हो जाने पर कहीं घबराकर साधू-फकीर न हो जायँ। '

विंध्ये. -'मुझे भी तो यही डर लगता है। इसी से तो मैंने कह दिया कि अभी जल्दी क्या है। '

माता -'ज़ितने ही दिन उनकी सेवा करोगी, उतना ही उनका स्नेह बढ़ेगा; और तुम्हारे जाने से उन्हें उतना ही दु:ख भी अधिक होगा। बेटी, सच तो यह है कि वह तुम्हीं को देखकर जीते हैं। इधर तुम्हारी डोली उठी और उधर उनका घर सत्यानाश हुआ। मैं तुम्हारी जगह होती, तो उन्हीं से ब्याह कर लेती। '

विंधये.-' ऐ हटो अम्माँ, गाली देती हो ? उन्होंने मुझे बेटी करके पाला है। मैं भी उन्हें अपना पिता ...'

माता -'चुप रह पगली ! कहने से क्या होता है ? '

विंधये. 'अरे सोच तो अम्माँ, कितनी बेढंगी बात है ! '

माता -'मुझे तो इसमें कोई बेढंगापन नहीं देख पड़ता। '

विंधये. -'क्या कहती हो अम्माँ, उनसे मेरा मैं तो लाज के मारे मर जाऊँ, उनके सामने ताक न सकूँ। वह भी कभी न मानेंगे। मानने की बात भी हो कोई। '--

माता -'उनका जिम्मा मैं लेती हूँ। मैं उन्हें राजी कर लूँगी। तू राजी हो जा। याद रख, यह कोई हँसी-खुशी का ब्याह नहीं है, उनकी प्राणरक्षा की बात है, जिसके सिवा संसार में हमारा और कोई नहीं। फिर अभी उनकी

कुछ ऐसी उम्र भी तो नहीं है। पचास से दो ही चार साल ऊपर होंगे। उन्होंने एक ज्योतिषी से पूछा, भी था। उसने उनकी कुंडली देखकर बताया है कि आपकी जिन्दगी कम-से-कम 20 वर्ष की है। देखने-सुनने में भी वह सौ-दो-सौ में एक आदमी हैं। '

बातचीत में चतुर माता ने कुछ ऐसा शब्द-व्यूह रचा कि सरल बालिका उसमें से निकल न सकी। माता जानती थी कि प्रलोभन का जादू इस पर न चलेगा। धन का, आभूषणों का, कुल-सम्मान का, सुखमय जीवन का उसने

ftक्र तक न किया। उसने केवल चौबेजी की दयनीय दशा पर जोर दिया।

अन्त को विंध्येश्वरी ने कहा, 'अम्माँ, मैं जानती हूँ कि मेरे न रहने से उनको बड़ा दु:ख होगा; यह भी जानती हूँ कि मेरे जीवन में सुख नहीं लिखा है। अच्छा, उनके हित के लिए मैं अपना जीवन बलिदान कर दूँगी। ईश्वर की यही इच्छा है, तो यही सही। '

चौबेजी के घर में मंगल-गान हो रहा था। विंध्येश्वरी आज वधू बनकर इस घर में आयी है। कई वर्ष पहले वह चौबेजी की पुत्री बनकर आयी थी ! उसने कभी स्वप्न में भी न सोचा था कि मैं एक दिन इस घर की स्वामिनी बनूँगी।

चौबेजी की सज-धाज आज देखने योग्य है। तनजेब का रंगीन कुरता, कतरी हुई और सँवारी हुई मूँछें, खिजाब से चमकते हुए बाल, हँसता हुआ चेहरा, चढ़ी आँखें यौवन का पूरा स्वाँग था ! रात बीत चुकी थी। विंध्येश्वरी आभूषणों से लदी हुई, भारी जोड़े पहने, फर्श पर सिर झुकाये बैठी थी। उसे कोई उत्कंठा न थी, भय न था, केवल यह संकोच था कि मैं उनके सामने कैसे मुँह खोलूँगी ? उनकी गोद में खेली हूँ; उनके कन्धों पर बैठी हूँ, उनकी पीठ पर सवार हुई हूँ, कैसे उन्हें मुँह दिखाऊँगी। मगर वे पिछली बातें क्यों सोचूँ। ईश्वर उन्हें प्रसन्न रखे। जिसके लिए मैंने पुत्री से पत्नी बनना स्वीकार किया, वह पूर्ण हो। उनका जीवन आनन्द से व्यतीत हो।

इतने में चौबेजी आये। विंध्येश्वरी उठ खड़ी हुई। उसे इतनी लज्जा आयी कि जी चाहा कहीं भाग जाय। खिड़की से नीचे कूद पड़े।

चौबेजी ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोले, 'बिन्नी, मुझसे डरती हो ? '

बिन्नी कुछ न बोली, मूर्ति की तरह वहीं खड़ी रही। एक क्षण में चौबेजी ने उसे बिठा दिया, वह बैठ गयी। उसका गला भर-भर आता था। भाग्य की यह निर्दय लीला, यह क्रूर क्रीड़ा उसके लिए असह्य हो रही थी।

पंडितजी ने पूछा, 'बिन्नी, बोलती क्यों नहीं ? क्या मुझसे नाराज हो ? '

विंध्येश्वरी ने अपने कान बंद कर लिये। यही परिचित आवाज वह कितने दिनों से सुनती चली आती थी। आज वह व्यंग्य से भी तीव्र और उपहास से भी कटु प्रतीत होती थी। सहसा पंडितजी चौंक पड़े, आँखें फैल गयीं और दोनों हाथ मेंढक के पैरों की भाँति सिकुड़ गये। वह दो कदम पीछे हट गये। खिड़की से मंगला

अंदर झाँक रही थी ! छाया नहीं, मंगला थी मंगला थी सदेह, साकार, सजीव !

चौबेजी काँपती हुई टूटी-फूटी आवाज से बोले 'बिन्नी देखो, वह क्या है ? '

बिन्नी ने घबराकर खिड़की की ओर देखा। कुछ न था। बोली, 'क्या है ? मुझे तो कुछ नहीं दिखाई देता।

चौबेजी -'अब गायब हो गयी; लेकिन ईश्वर जानता है, मंगला थी। '

बिन्नी-' बहन ? '

चौबेजी -'हाँ-हाँ, वही। खिड़की से अंदर झाँक रही थी। मेरे तो रोयें खड़े हो गये। '

विंध्येश्वरी काँपती हुई बोली, 'मैं यहाँ नहीं रहूँगी। '

चौबे-' नहीं, नहीं, बिन्नी, कोई डर नहीं है, मुझे धोखा हुआ होगा। बात यह है कि वह घर में रहती थी, यहीं सोती थी, इसी से कदाचित् मेरी भावना ने उसकी मूर्ति लाकर खड़ी कर दी। कोई बात नहीं है। आज का दिन कितना मंगलमय है कि मेरी बिन्नी यथार्थ में मेरी ही हो गयी ... '

यह कहते-कहते चौबेजी फिर चौंके। फिर वही मूर्ति खिड़की से झाँक रही थी मूर्ति नहीं, सदेह, सजीव, साकार मंगला ! अबकी उसकी आँखों में क्रोध न था, तिरस्कार न था, उनमें हास्य भरा हुआ था, मानो वह इस दृश्य

पर हँस रही है मानो उसके सामने कोई अभिनय हो रहा है।

चौबेजी ने काँपते हुए कहा, 'बिन्नी, फिर वही बात हुई ! वह देखो, मंगला खड़ी है ! '

विंध्येश्वरी चीखकर उनके गले से चिमट गयी !

चौबेजी ने महावीर का नाम जपते हुए कहा, 'मैं किवाड़ बंद किये देता हूँ। '

बिन्नी -'मैं इस घर में नहीं रहूँगी। (रो कर) भैयाजी, तुमने बहन के अंतिम आदेश को नहीं माना, इसी से उनकी आत्मा दुखी हो रही है। मुझे तो किसी अमंगल की आशंका हो रही है।'

चौबेजी ने उठकर खिड़की के द्वार बन्द कर दिये और कहा, 'मैं कल से दुर्गापाठ कराऊँगा। आज तक कभी ऐसी शंका न हुई थी। तुमसे क्या कहूँ, मालूम होता है ... होगा; उस बात को जाने दो। यहाँ बड़ी गरमी पड़

रही है। अभी पानी गिरने को दो महीने से कम नहीं हैं। हम लोग मंसूरी क्यों न चलें।'

विंधये.-' मेरा तो कहीं जाने का जी नहीं चाहता। कल से दुर्गापाठ जरूर कराना। मुझे अब इस कमरे में नींद न आयेगी।'

पंडित -'ग़्रंथों में तो यही देखा है कि मरने के बाद केवल सूक्ष्म शरीर रह जाता है। फिर समझ में नहीं आता, यह स्वरूप क्योंकर दिखाई दे रहा है। मैं सच कहता हूँ बिन्नी, अगर तुमने मुझ पर यह दया न की होती; तो

मैं कहीं का न रहता। शायद इस वक्त मैं बद्रीनाथ के पहाड़ों पर सिर टकराता होता, या कौन जाने विष खाकर प्राणांत कर चुका होता ! '

विंधये.-' मंसूरी में किसी होटल में ठहरना पड़ेगा ! '

पंडित -'नहीं, मकान भी मिलते हैं। मैं अपने एक मित्र को लिखे देता हूँ, वह कोई मकान ठीक कर रखेंगे वहाँ ... ...

बात पूरी न होने पायी थी कि न-जाने कहाँ से ज़ैसे आकाशवाणी हो आवाज आई 'बिन्नी तुम्हारी पुत्री है।'

चौबेजी ने दोनों कान बंद कर लिये। भय से थर-थर काँपते हुए बोले, 'बिन्नी, यहाँ से चलो। न जाने कहाँ से आवाजें आ रही हैं।'

'बिन्नी तुम्हारी पुत्री है !' यह ध्वनि सहस्त्र कानों से पंडितजी को सुनाई पड़ने लगी, मानो इस कमरे की एक-एक वस्तु से यही सदा आ रही है। बिन्नी ने रोकर पूछा, 'क़ैसी आवाज थी ? '

पंडित -'क्या बताऊँ, कहते लज्जा आती है।'

बिन्नी -'ज़रूर बहनजी की आत्मा है। बहन, मुझ पर दया करो, मैं सर्वथा निर्दोष हूँ।'

पंडित -'फ़िर वही आवाज आ रही है। हाय ईश्वर ! कहाँ जाऊँ ? मेरे तो रोम-रोम में वे ही शब्द गूँज रहे हैं। बिन्नी, बुरा किया। मंगला सती थी, उसके आदेश की उपेक्षा करके मैंने अपने हक में जहर बोया। कहाँ जाऊँ, क्या करूँ ? '

यह कहकर पंडितजी ने कमरे के किवाड़ खोल दिये और बेतहाशा भागे। अपने मरदाने कमरे में पहुँचकर वह गिर पड़े। मूर्छा आ गयी। विंध्येश्वरी भी दौड़ी, पर चौखट से बाहर निकलते ही गिर पड़ी !